प्रो.बी. आर.देवधर का सम्पादकीय अवदान

लवली सेन ,अमरावती

.....

सारांश :–संगीत प्रकृति की एक सर्वाधिक सुंदर रचना है । हमारा संगीत विश्व में सबसे प्राचिनतम संगीत माना जाता है। हिंदुस्तानी संगीत को एक गौरवशाली परंपरा प्राप्त है। अनेकों विव्दानों ने संगीत के क्रिया तथा शास्त्र पक्ष का विवेचन किया है। वेदों में भी संगीत का उल्लेख अति विस्तार से हुआ है। सामवेद मे संगीत के क्रियापक्ष तथा शास्त्रपक्ष की विस्तृत चर्चा की गयी है। उसके बाद महर्षि भरत ने अपने भनाट्यशास्त्र ✻ में इस कला पर सखोल प्रकाश डाला है। महर्षि भरत की तरह ही अनेकों विद्वानों ने अपनी प्रतिभा से संगीत शास्त्रपक्ष पर अमुल्य ग्रंथों की रचनायें की हैं। इसमें शारंगदेव कृत संगीत रत्नाकर✻,८ वीं शताब्दी में, नारद कृत–भसंगीत मकरंद✻१३ वीं शताब्दी में, महाराणा कुम्भाकृत भसंगीत राज✻,मतंग मुनि की रचना भबृहद्देशी✻, दक्षिण के विद्वान रामामात्य की भस्वर मेल कला निधि✻, पं. अहोबल की भसंगीत पारिजात✻इत्यादि अनेकों ग्रंथोंकी सुची भारतीय संगीत की उज्जवल पंरपरा की पुष्टि हेतु दी जा सकती है। पंरतु हिंदुस्तान में मुस्लिम साम्राज्य के विस्तार के बाद १८ वीं १९ वीं शताब्दीं में भारतीय संगीत की गौरवशाली पंरपरा का ऱ्हास होने लगा। उच्च समान संगीत से दूर जाने लगा। गाने –बजाने वाले बहुत से लोग अनपढ और व्यसनी थे। इन्हे संगीत के शास्त्र पक्ष की जानकारी नहीं थी। फलस्वरुप संगीत को हीन दृष्टि से देख जाने लगा। संगीतकारों में न तो शिक्षा थी न ही शिस्त । हरकोई अपने – अपने तरीकेसे गाना –बजाना कर रहा था। एक समय तो ऐसा भी आया जब संगीत केवल कोठों की शान बनकर रह गया। ऐसे में एक महान संगीतज्ञ हुए जिन्होंने न केवल संगीत के क्रियापक्ष बल्कि शास्त्रपक्ष पर भी भरपूर कार्य किया। वह थे प्रो. बी. आर देवधर, प्रस्तुत लेख में प्रो.बी.आर. देवधर जी का सम्पादकीय अवदान पर प्रकाश डालने का प्रयत्न किया गया है ।

प्रो. देवधर जी ने संगीत की स्थापित मासिक पत्रिका भसंगीत कला विहार ✻का सम्पादन बडी प्रगल्भता से किया। वे इसके आद्य संपादक रहे तथा लगातार २५ वर्षोंतक उन्होंने यह दायित्व निभाया। यह पत्रिका अखिल भारतीय गांधर्व महाविद्यालय मंडल की एक तरह से मुखपत्रिका कही जा सकती है। यह अखिल भारतीय गांधर्व महाविद्यालय मंडल के पीठ स्थल मिरज से प्रकाशित होती है। संगीत कला विहार का प्रकाशन १९४७ से आरम्भ हुआ तथा इसके संस्थापक स्व. पं. शंकरराव व्यास थे । प्रो. देवधर ने रागबोध (६ भाग),गायनाचार्य पं. विष्णु दिगंबर पलुस्कर, थोर संगीतकार, आवाज साधना शास्त्र भथोर संगीताची परम्परा✻नामक पुस्तकें लिखी । सम्पादक यह शब्द सम्+पद+ णिच्+ल्पुट से बना है। जिसका अर्थ है निष्पादन, कार्यान्वियन, पुरा कराना, उपार्जन करना, प्राप्त करना, अवाप्त करना, भूमि को स्वच्छ करना, साफ करना इत्यादि ।आशय यह है कि, सम्पादन का अर्थ करना या सम्पन्न करना होता है। साथ ही जब कोई कार्य अच्छी तरह से, सम्यक रुप से ,तथा पूर्ण रुप से सम्पन्न किया जाता है, वहाँ भी सम्पादन शब्द का व्यवहार किया जाता है।इस दृष्टि से सम्पादक का अर्थ किसी कार्य को सम्यक और अशषेत: करने वाला है। परंतु आज भसम्पादक✻अंग्रजी का समानार्थी बन चला है । एवळीउसे कहते हैं ,जो किसी सामग्री का यथावश्यक संशोधन, काँट –छाँट और यथावश्यक कुछजोडकर उसे एक व्यवस्थित तारतम्य में रखकर अच्छा रुप बनाता है।सम्पादक में जो गुण वांछित है उनमें से कतिपय प्रमुख गुण निम्नलिखीत हैं। **१.** पत्र पत्रिका पुस्तक जिस विषय की है, उसका गहन ज्ञान सम्पादक को अनिवार्य रुप से होना चाहिए। इसके बिना पत्र /पत्रिका/ पुस्तक में दी जानेवाली सामग्री का सम्पादन ठीक से नहीं हो पाता और पत्रिका का स्तर नही बन पाता । अत: सम्पादक को विषय का पूर्ण विद्वान होना चाहिए।**२.** प्रकाशन स्तरीय बन पडे इसके लिए आवश्यक है कि सम्पादक में उत्तम चयन योग्यता हो तथा प्रकाशन का समग्र कलेवर सुगढ बनाने की परिकल्पना हो । **३.** पत्रिका आदि की जो भाषा है, उसपर सम्पादक का अशेष अधिकार होना चाहिए । इसके अभाव मे सामग्री की भाषा का संशोधन या त्रुटि–सुधार तथा उसमें अपेक्षित जोड–घटाव अच्छी तरह नहीं हो सकता। **४.** सम्पादक को पूर्व ग्रहमुक्त, खेमेबाजी से परे, तथा उदार चेता होना चाहिए । भेजी गई सामग्री को व्यक्तिगत राग–व्देष के आधार पर स्वीकार–अस्वीकार नहीं किया जाना चाहिए। सिर्फ चहेतों की सामग्री ही छपते रहने से पत्र /पत्रिका आदि पर गुटबंदी और पक्षपात् के आरोप लग सकते हैं **५.** एक अच्छे सम्पादक के लिए यह आवश्यक है कि, उसका परिचय क्षेत्र व्यापक हो और विषय के श्रेष्ठ रचनाकारों से उसका व्यक्तिगत सम्पर्क हो, ताकि प्राप्त सामग्री के अतिरिक्त अच्छी तथा स्तरीय रचनाएँ वह आमंत्रित कर प्राप्त कर सके **६.** अन्यान्य भाषाओं पर भी सम्पादक का अधिकार होना चाहिए, ता कि उन भाषाओं की रचनाओं तथा अनूदिन रचनाओं के साथ वह उचित न्याय कर सकें। कुल मिलाकर एक आदर्श सम्यादक की भूमिका परिवार के पिता जैसी होती है, जो हर सदस्य को एक समान प्यार करता है। उपर निर्दिष्ट बिन्दुओं के आधार पर प्रो देवधर के सम्पादक पक्ष का अध्ययन करने पर ज्ञात होता है कि प्रो. देवधर असंदिग्ध रुप से संगीत के सर्वोच्च विद्वान तथा कलाकार थे। संगीत के शास्त्र पक्ष, क्रिया पक्ष ,वैचारिक–पक्ष,तथा सनातन और अद्यतन प्रयोग सभी में वे समान रुप से रुची लेते थे तथा सभी में दक्ष थे। इसके कारण उनके कार्यकाल में भसंगीत कला विहार

✻पत्रिका क्रमश: निखरते हुए संगीत की स्तरीय और लोकप्रिय पत्रिका बनी। अपनी इसी योग्यता के कारण वे संगीत कला विहार के अंको के लिए उत्तमोत्तम सामग्री का चयन करते थे तथा उसका उत्तम प्रस्तुतिकरण भी करते थे। शास्त्र पक्ष, विचारपक्ष,संगीत रचना अर्थात बंदिश पक्ष, संगीत के गायन ,वादन, नृत्य तीनों पक्ष तथा सांगीतिक समाचार पक्ष सभी का समावेश उन्होने संगीत कला विहार में किया। संगीत के सारे पक्षों में निष्णात होने के कारण जहाँ उन्होने कभी किसी रचनाकार की कलम पर कलम चलायी तब भी रचनाकारों की ओर से आपत्ति के स्वर नहीं उठे । देवधर जी को मराठी भाषा का पूर्ण तथा विविध पक्षीय ज्ञान था। मुंबई में महाराष्ट्रीयनों की संख्या के

लगभग समान ही गुजराती रहते आये हैं, तथा दोनों ही भाषा–भाषियों के बीच प्रगाढ संबंध रहें हैं। पारस्परिक सम्पर्क के कारण वे एक– दूसरे की भाषाएँ अच्छे और सही तरीके से बोल, पढ और लिख लेते हैं। देवधर जी अपने समकालीन संगीतज्ञों मे अंग्रेजी के अच्छे विज्ञ रहे । इसके फलस्वरुप संगीत कला विहार में मराठी, गुजराती और अंग्रेजी की संगीतिक सामग्री ढी जाती रही । वे बडी बारीकी से न केवल प्रकाश्य सामग्री का निरीक्षण परिक्षण करते थे, अपितु पत्रिका के झीषभी उतनी ही बारीकी से देखते –सुधारते थे।व्यक्ति और संगीतज्ञ दोनों रुपों मे देवधर जी के अपार भक्त और चाहने वाले थे। उनका सभी श्रेष्ठ संगीतज्ञों के साथ बहुत मधुर और निकट का संबंध था। इसलिए उनके पास संगीत कला विहार के लिए बडी मात्रा में सामग्री आ जाती थी। वे बडी सावधानी से संगीत कला विहार के पृष्ठों में समा सके इस तरह सामग्री चयन करते थे।पक्षपात मुक्त वृत्ति के कारण वे पुर्वग्रह तथा गुटबाजी या खेमेबाजी से ग्रस्त नहीं थे। इसलिए सभी घरानों और परम्पराओं के लोगों से उन्हे अपेक्षित सामग्री प्राप्त करने में कोई कठिनाई नहीं होती थी।देवधर जी के कार्यकाल में सगीत कला विहार की जो प्रतियाँ है, वो इसलिए बहुत संग्रहणीय बन गयी है , कि केवल ऐतिहासिक दृष्टि से उनका महत्व नहीं है, बल्की सामग्री की दृष्टि से भी उनका बडा महत्व है।प्रो. देवधर जबतक सम्पादक,रहे तबतक उन्होंने अपनी संपादकीय में सम–सामायिक विषयोंपर अपने खुले विचार रखे। उनके यह विचार पाठकों को कला और कला पारखी का परिचय देते थे। साथ ही प्रेरणा और प्रोत्साहन भी उनके सम्पादकीय लेखनी में दृष्टव्य होता है।

निष्कर्ष :–

१) प्रो. बी. आर. देवधर जी अपने समय के थोर संगीतज्ञ थे,जिनको संगीत के क्रिया–पक्ष ,विचार–पक्ष, शास्त्र पक्ष का सम्यक ज्ञान था।

२) वह एक सिद्धहस्त लेखक, सम्पादक तथा टीकाकार थे।

३) उनकी सम्पादकीय गतिविधियों के कारण ही उनके काल के संगीत समाज में शास्त्रपक्ष का उचित फतरीके से प्रचार–प्रसार हुआ

संदर्भ :–१) वामन शिवराम आपटे संस्कृत हिन्दी कोष, नाग प्रकाशन, दिल्ली

२) संगीताचार्य प्रो.बी.आर. देवधर,डॉ.अपेक्षा पेंढारकर गान्धर्व महाविद्यलय,पृष्ठ क्र.४३

३) संगीत कला विहार,जून १९५६ वर्ष ९ अंक ६

४) संगीत कला विहार,मार्च १९५७ वर्ष १० अंक ३

५) संगीत कला विहार,अप्रैल १९५७ ,वर्ष १०,अंक ४

६) संगीत कला विहार,फरवरी १९५८ वर्ष ११, अंक २

७) डॉ. स्नेहाशीष ज.दास,प्रो. देवधर का लेखन कार्य, पंचम अध्याय,प्रो. बी.आर.देवधर का संगीतिक योगदान,शोध प्रबन्ध,इं.क.सं.वि.वि.,खैरागढ,२००९